International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

डॉ. अम्बेडकर केवल दलितों के मसीहा नहीं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Inderjeet Ahlawat
UGC- NET
Department of History
Email : inder21ahlawar@gmail.Com

भारतरत्न डॉ. भीमराव अंबेडकर के विरुद्ध दलितों का मसीहा होने का एक प्रबलता प्रमाण यह प्रस्तुत किया जाता है कि उन्होंने संविधान से जाति विशेष के लोगों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करके समाज की अन्य जातियों के साथ समाजार्थिक भेदभाव की नींव रखी है। इनके द्धारा की गई इस संवैधानिक व्यवस्था के कारण समाज के अन्य समाजार्थिक रूप से पिछडे लोगों के साथ जाति के आधार पर स्वभावश भेदभाव हो गया है और जिनकी दशा दलितों से भी अधिक दयनीय है, वे जाति–भेद के कारण संशोधित है । आश्चर्यजनक तथा दुखद तथ्य तो यह है कि अज्जारक्षणक्व विषयक संवैधानिक उपबंधों का बिना गहनतापूर्वक अध्ययन तथा व्याख्या किए जो भी डॉ. अम्बेडकर के विरुद्ध लगाए गए इस निराधार आरोप को सुनते हैं, उनमें अधिकाशतः इसे सत्य मानकर तत्क्षण सांविधान निर्माता डॉ. अम्बेडकर के विरूद्ध पूर्वाग्रहपूर्ण निराधार एकपक्षीय राय कायम कर उनके सप्पूर्ण व्यक्तित्व एव कृतित्व को उसी मापदण्ड से देखने लगते है। नतीजा यह है कि इस महामानव के वहुत सरि अनमोल सुझावों का लाभ उठाने से हम तथा हमारा समाज वंचित है । साथ ही आज भी डॉ. अम्बेडकर को भारत में यह स्थान प्राप्त नहीं है, जिसके वे सर्वथा अधिकारी हैं

डॉ. अम्बेडकर द्धारा सृजित भारतीय सविधान तथा उनके द्धारा रचित कुछ पुस्तकों में उनके व्यक्त विचारों के अपर पर यह सिद्ध करने का प्रमाण प्रस्तुत किया जा रहा है कि वे जाति विशेष के नहीं; बल्कि मानवमात्र के हितचिंतक तथा शुभचिंतक थे जोर इससे भी बढ़कर राष्ट्रप्रेम की अविरल वेगवती धारा उनके अन्ताप्रदेश में सदैव प्रवहमान रहती थी । यहां प्रारम्भ में ही इस बिन्दु को स्पष्ट कर देना आवश्यक प्रतीत होता हैं कि डॉ. अम्बेडकर को भारतीय संविधान का निर्माता क्यों कहा जाता है जबकि वे मात्र संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे। इसकी पुष्टि के लिए बिना विस्तार में गए संविधान लेखन समिति के एकसदस्य टी.अी. कृष्णामाचारी के पांच नवम्बर, 1948 के भाषण के इस अंश को यहां उद्धृत कर देना मात्र यथेष्ठ प्रतीत होता है जिसमें उन्होंने स्पष्ट कहा है कि – यह सभागार इस बात से परिचित है कि लेखन समिति के कुल सात में से – 'एन. गोपालस्वामी अय्यंगर अल्लादि, कृष्णास्वामी अय्यर, के.एम. मुंशी, सर मोहम्मद सादूल्ला, एन. माधव, मेनन, डी.पी. खेतान'–एक ने त्यागपत्र दे दिया। उसकी जगह भरी नहीं हुई। एक सदस्य की मृत्यु हो गई। उसकी जगह भी खाली है। एक सदस्य अमेरिकाएक उनका स्थान भी रिक्त है। चौथे रिक्त रियासत सम्बंधी कार्य में उलझे हुए है, इस कारण उनकी सदस्यता नाममात्र है। एक दो सदस्य दिल्ली से बहुत दूर हैं। उनकी तबीयत बिगड़ जाने के कारण वे लेखन समिति की बैठकों में उपस्थित ही नहीं हो सके। अंततः हुआ यही कि संविधान निर्माण की सारी जिम्मेदारी अकेले अम्बेडकर जी को ही संभालनी पड़ी। ऐसी स्थिति में उन्होंने जिस पद्धति और परिश्रम से काम किया, उस कारण से इस सभागृह के आदर के पात्र हैं। राष्ट्र इसके लिए उनका सदा ऋणी रहेगा।

एक आम धारणा वास्तव में अफवाह कहें, यह भी प्रचारित है कि बाबा साहब ने मात्र संविधान का प्रारूप तैयार कर दिया था। इसके अतिरिक्त उनमें अन्य अन्य कोई उल्लेखनीय बात नहीं थी, जबकि सच यह है कि भारतरत्न डॉ. अम्बेडकर अपने समय के विश्व में उंगलियों पर गण्य न्यायविद्, शिक्षाविद्, अर्थशास्त्री, रजनीतिज्ञ, धर्मज्ञ, समाजशास्त्री तथा मानवतावादी व्यक्तियों में एक थे। उनकी मेधा तथा विद्वता का विश्व के बुद्धिजीवी लोहा मानते थे।

सबसे गंभीर आरोप डॉ. अम्बेडकर पर इस बात को लेकर लगाया जाता है कि उन्होंने अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए संविधान में जाति के आधार पर आरक्षण की व्यवस्था करे समाज के अन्य वर्ग एवं वर्ण के प्रति विभेद किया। यहां प्रारंभ में ही यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि बाबा साहेब से संविधान में किस जाति को

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 04 Issue 12
September 2017

आरक्षण दिया जाए, उसका एक जगह भी नामोल्लेख तक नहीं किया है। यह काम सस्कार और संसद के जिम्मे किया है कि वह तय करें कि आरक्षण किस जाति को देनी है ।

संविधान के अनुच्छेद–15 में स्यष्ट लिखा गया है कि राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के विशिष्टतया अनुसूचित जातियों और जनजातियों के शिक्षा और आदि सम्बन्धी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्यास और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा। इसी तरह संविधान के अनुच्छेद–15 में लिखा गया है कि **There shall e equality of opportunity for all citizens in matters relating to employment or appointment to any office under the state.**[1] गौरतलब है कि यहां आरक्षण की संवैधानिक व्यवस्था या व्याख्या करने में डॉ. अम्बेडकर के द्वारा पूरे संविधान में कहीं भी किसी जाति विशेष के नाम तक की चर्चा नहीं की गई है। यह पूर्णतः राज्य या सरकार के विवेक पर छोड़ दिया गया है कि वह देखे संविधान का अनुच्छेद–341 एवं 342, अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की सूची में किस जाति को शामिल करेगी, वह उसका काम है। तात्पर्य यह कि सरकार आरक्षण के तहत आर्थिक, सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोगों को मुख्य धारा में शामिल करने के लिए स्वविवेकानुसार विशेष प्रावधान कर सकती है। इसमें किस जाति को अनुसूचित जाति अनुसूची में तथा किस जाति को अनुसूचित जाति में डालना है, इससे तो डॉ. अम्बेडकर को कोई मतलब ही नहीं था। यह काम तो सरकार के हाथ में था और अब भी है और सरकार ही तब भी अपने निर्णय के अनुसार इन अनुसूचियों में जातियों का नाम शामिल करती थी और आज भी कर रही है। फिर इस आधार पर संविधानशिल्पी डॉ. अम्बेडकर को केवल दलितों का मसीहा कहना क्या न्यायसंगत है?

जो लोग अम्बेडकर पर दलितों के लिए स्थायी तौर पर आरक्षण की संवैधानिक व्यवस्था कर देने का आरोप लगाते हैं, उनके सुलभ प्रसंग के लिए डॉ. अम्बेडकर के द्वारा ही इसी संविधान में अंकित की गई इस बात को यहां उद्धृत कर देना प्रासंगिक है कि वे इसके पक्ष में थे ही नहीं। यथा संविधान के अनुच्छेद–334 में उन्होंने लिखा कि–स्थानों के आरक्षण और विशेष प्रतिनिधित्व का साठ वर्ष के पश्चात् न रहना–इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी लोकसभा और राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों अनुसूचित जातियों के लिए स्थानों आरक्षण संबंधी और लोक सभा में विधान सभाओं में नाम निर्देशन द्वारा आंग्ल भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व संबंधी इस संविधान के उपबंध इस संविधान के प्रारंभ से साठ वर्ष की अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेंगे।"[2] यहां यह उल्लेखनीय है कि इस तरह की संवैधानिक व्यवस्था करने के लिए डॉ. अम्बेडकर को तात्कालिक परिस्थितियों के कारण बाध्य किया गया था। वे इस समस्या के समाधान के लिए कुछ दूसरी ही व्यवस्था करने के पक्षधर थे।

इसी तरह अनुच्छेद–335 में सेवाओं और पदों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जातियों के दावों के संबंध में लिखा गया है कि–संघ या किसी राजय के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातिों के सदस्यों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाये रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा। अनुच्छेद–336 में कुछ सेवा में आंग्ल भारतीय समुदाय के लिए विशेष उपबंध करने हेतु कहा गया है कि – इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् प्रथम देश वर्ष के दौरान संघ की रेल, सीमा शुल्क, डाक और तार संबंधी सेवाओं में पदों के लिए आंग्ल भारतीय समुदाय के सदस्यों की नियुक्तियों उसी आधार पर की जाएंगी जिस आधार पर 15 अगस्त 1947 से ठीक पहले की जाती थीं। परन्तु इस संविधान के प्रारंभ से 10 वर्ष के अंत में ऐसे सभी आरक्षण समाप्त हो जाएंगे।

बाबा साहब की मृत्यु तो संविधान लागू होने के छः वर्ष बाद ही हो गई। फिर बाबा साहब आरक्षण की अवधि विस्तार के लिए दोषी कैसे हैं? यह स्वयमेव विचारणीय है। लेकिन विश्वविख्यात न्यायविद् तथा महान मानवतावादी बोधसत्व बाबा साहब भारतरत्न डॉ. अम्बेडकर के व्यक्तित्व को धूमिल करने तथा जनमानस में उनकी छवि मात्र हितचिंतक के रूप में प्रचारित–प्रसारित करने के लिए जानबूझकर उनके विषय में यह गलत प्रचार कुछ मानवता–द्रोहियों के द्वाा किया जाता है।

मात्र 10 वर्ष के लिए ही आरक्षण की बात कही थी डॉ. अम्बेडकर ने

बावजूद इसके बाबा साहब को संशय था कि राजनीतिक पार्टियां इसका गलत मंशा से उपयोग कर सकती हैं। इसलिए उन्होंने स्पष्ट किया कि यह व्यवस्था मात्र 10 वर्ष के लिए की जानी चाहिए और इस अवधि में वे सारे प्रयास पूर्ण कर लेने चाहिए जिससे कि इसे आगे जारी रखने की गुंजाइश ही शेष्ज्ञ नहीं बचे। स्पष्ट है कि बाबा साहब इस सुविधा को बैसाखी बनने देने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने इसे और स्पष्ट करते हुए कहा कि यदि पूर्ण

ईमानदारी से इस व्यवस्था को लागू किया जाएगा तो निश्चित रूप से 10 वर्ष के बाद इसको जारी रखने की आवश्यकता स्वतः समाप्त हो जाएगी।

यदि महान मानवतावादी डॉ. अम्बेडकर के उपरोक्त दृष्टिकोण के बाद भी उन्हें आज भी मात्र दलितों के मसीहा के रूप में बिम्बित किया जाता है, तो इसे मानवता के उपहास के सिवा और क्या कहा जा सकता है।

कुछ लोगों का यह तर्क हो सकता है कि आखिर संविधान में आरक्षण की व्यवस्था के कारण ही तो दलितों को यह सुविधा उपलब्ध है जिसके कारण दलितों से भी अधिक दलित–दमित जातियां उपेक्षित हैं। तो प्रथमतः इसका समाधान यह है कि अनुसूचित जाति या जनजाति की अनुसूची में परिगणित करने का का डॉ. अम्बेडकर के द्वारा नहीं किया गया है। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, अनुसूची का अर्थ जाति नहीं, बल्कि लिस्ट होता है। इस अनुसूची को बनाने तथा इसमें किस जाति को शामिल करना है, यह काम तथा अधिकार सरकार को सौंपा गया है और इस काम को सरकारें ही करती हैं। इसमें डॉ. अम्बेडकर का कोई योगदान नहीं था। फिर उनके ऊपर यह निराधार तथा गलत आरोप लगाना कहां तक न्यायसंगत है? साथ ही अनुसूची में नामित जाति को किसी भी आधार पर अस्पृश्य या दलित कहने का कोई औचित्य नहीं ठहरता है। फिर भी इसका मनमाना अर्थ लगाया जा रहा है तथा अद्नुकूल भेदभाव भी बरता जा रहा है। यह मानवता के माथे पर अशोभन कलंक के समान है। इस पर विवेकशील मानव को गौरव करना चाहिए।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि इन्हीं उपरोक्त असंवैधानिक प्रावधानों के तहत मंडल आयोग का गठन संभव हुआ और इसी के आधार पर आयोग की अनुशंसाओं को मानते हुए क्रमशः प्रादेशिक एवं केन्द्रीय सेवाओं में पिछड़ी जातियों के लोगों को आरक्षण का लाभ मिल रहा है।

इसे आप बाबा साहब का कैसा दलित प्रेम कहें? क्या जो इस मानवता के सेवक को बावजूद इसके केवल दलित का मसीहा कहते हैं, यह तर्कसंगत है? कहना न होगा कि मंडल कमीशन कोई नई अवधारधा न होकर बाबा साहब द्वारा किए किए संविधानिक प्रावधान का मात्र क्रियान्वयन है।

मौलिक अधिकार क निरूपण में डॉ. अम्बेडकर का मानवतावादी दृष्टिकोण

मूल या मौलिक अधिकार के मूल में जाया जाए तो ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तव में यह नैसर्गिक अधिकार का प्रतिरूप है या यूं कहा जाए कि संवैधानिक मौलिक अधिकार किसी स्वतंत्रदेश के निवासी का नैसर्गिक अधिकार है। यह उसे उसी तरह मिलना चाहिए जैसे हवा, पानी, प्रकाश, पृथ्वी तथा आकाश मिला हुआ है। बाबा साहब ने भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था करते समय इसको अपने दिल व दिमाग में किस तरह रखा था, इसका आभास हमें मौलिक अधिकारों के गवेषणात्मक अध्ययन से स्वतः हो जाता है। इतना तो निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि जिस तरह जीवन की प्रत्येक मूलभूत आवश्यकता को जिस सारगर्भिता के साथ भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार अध्याय में पिरो दिया गया है, वह विश्व के अन्य किसी देश के संविधान में शायद ही सुलभ हो।

यह सर्वविदित है कि मौलिक अधिकार की अवधारणा संविधान की आत्मा के समान है । इसमें डॉ. अम्बेडकर ने कहीं भी किसी भी आधार पर भारतीय नागरिको के साथ कोई भेदभाव नहीं किया है । साथ ही बाबा साहब ने मौलिक अधिकारों की चर्चा संविधान में करते समय बाधित सभी मर्यादाओं का भरपूर खयाल रखा है । इस सम्बन्ध मैं न्यायमूर्ति मुखर्जी द्वारा गोपालन बनाम मद्रास राज्य के मामले में की गई टिप्पणी यहीं उल्लेखनीय है–'स्वतंत्रत्ता आत्यंतिक या अनियंत्रित अथवा बंधनों से सर्वथा मुक्त नहीं हो सकती क्योंकि उससे तो अराजकता जोर अव्यवस्था हो जाएगी । सभी अधिकारों की प्राप्ति और उसके उपभोग पर...ऐसे युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं जो देश के शासकों द्वारा समाज की निरापदत्ता, स्वास्थ्य, ज्ञाति, साधारण व्यवस्था और नैतिकता के लिए आवश्यक समझे जाएं। प्रत्येक प्रकरण से यह व्यक्ति और समाज के परस्पर विरोधी हितो के समायोजन का प्रश्न होता है है–सामान्यतया प्रत्येक व्यक्ति को यह छूट है कि वह इच्छानुसार अपना जीवन बताए । वह चाहे जो यहि, चाहे जहाँ जाए, अपनी इच्छानुसार व्यापार, उपजीविका, या कारोबार को । वह जो भी विधिपूर्ण कार्य करना चाहता को और उससे कोई भी व्यक्ति बाधा या अड़चन न पहुंचाए। किन्तु इन रवतंत्रताओं के संरक्षण के लिए समाज को कुछ शक्तियों की आवश्यकता पाती है । इसलिए सविधान जनता के अधिकारों की घोषणा करने में व्यक्ति की स्वतंत्रता ओर सामाजिक सुरक्षा के बीच संतुलन करता है । संविधान का अनुच्छेद–19 व्यक्ति की रवतंत्रत्ताओं की एक सूची देता है और विभिन्न खंडों में वे निर्बन्धन दर्शाता है जो उन पर लगाए जा सकते है जिससे उनका कल्याण या साधारण सदाचार से संधर्ष नहीं हो ।[3]

तात्पर्य यह कि स्वतंत्रता का यदि गलत अर्थ लगाया जाता है या उसका गलत उपयोग जिया जाता है तो वह स्वच्छंदत्ता का रूप अख्यियार कर लेती है, और स्वत्छोदता अंततरू हमें गुलामी से भी बदतर स्थिति से ता देती है । इसलिए बाबा साहब ने मौलिक अधिकारों की व्यवस्था करने समय हुन मार्यादाओं का पूरा खयाल रखा है। आज यदि देश के गरीब से गर्राब व्यक्ति को भी इस देश से जीने का अधिकार प्राप्त है तो यह मौलिक अधिकार की ही देन है और यदि किसी भी तरह की असमानता तथा भेदभाव कायम है तो उन लोगों के कारण, जो अपने ही समान आदमी को आदमी काने और आदमी का अधिकार देने के पक्ष में नहीं हैं। भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकार का सम्मान करना नहीं चाहते
हैं। गैर–बराबरी के हिमायती हैं ।

बाबा साहब एक कुशल समाजशास्वी तथा अर्थशास्त्री भी थे । वे जानते थे कि वर्षों की गुलामी के बाद आजाद हुए भारत के लिए यह संभव नहीं है कि एक साथ देश के प्रत्येक नागरिक की आवश्यकताओं की पूर्ति वह कर सके । इसके साधन–स्रोत सीमित हैं । जरूरतें उसकी तुलना में अधिक हैं । इसलिए शनैः शनैः नागरिकों की वैसी आवश्यकत्ताओं को भी पूरा करने के लिए उन्होंने संविधान में निर्देश दिए जो कालक्रम में देश के नागरिकों के सर्वागीण विकास को मूर्तरूप प्रदान का सके । नीति निदेशक त्तथ्यों की चर्चा करते हुए बाबा साहब ने कहा कि राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी सस्थाओं को अनुप्राणित केरे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना जोर संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा ।

राज्य विशिष्टतया आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास बनेगा और न केवल व्यक्तियों के बीच बल्कि विभिन्न वेदों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास होगा। बावजूद इसके आज देश के अस्सी प्रतिशत धन एवं साधन स्रोतों पर मात्र बीस प्रतिशत लोगों का और बीस प्रतिशत धन पर अस्सी प्रतिशत लोगों का अधिकार है तो यह दोष जिसका है? बाबा साहब ने तो संविधान में ऐसी व्यवस्था नहीं की है । फिर दोषी कौन है, असामानता के लिए जिम्मेवार कौन है? यया बावा साहब ने यह सुझाव केवल
दलितों के उत्थान के लिए दिया था? यदि आज़ दूसरी जातियों में भी विपन्नता है और उनकी जाति के कुछ लोग अधिकतर सुविधाओं पर कुण्डली मारकर बैठे है। तो इसमें दोष किसका है?

निष्कर्ष

यहां यह स्वतः स्पष्ट है कि इन सिद्धान्तों में कहीं भी संविधान निर्माता के द्वारा किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं बरता गया है। सच तो यह है कि आज संघ तथा प्रांतीय सरकारों के द्वारा बाबा साहब के सुझाए गए इन्हीं नीति निदेशक तत्वों का अनुसरण कर विभिन्न कार्यक्रम नए–नए नामों से संचित कर उन्हें अपना–अपना अभिनव आविष्कार मान कर खुद अपने हाथों अपनी पीठ थपथपाई जा रही है। क्या किसी ने यह सोचने या कहने का कष्ट किया है कि यह सब मानवतावादी डॉ. अम्बेडकर के सुप्रयासों का प्रयास है? यह इस देश का दुर्भाग्य ही है कि यहां जाति के नाम पर हमेशा से मनीषियों में विभेद किया जाता रहा है तथा यदि जाति ग्राह्य नहीं हुई तो झूठी लांछना लगाकर उन्हें गुमनामी के गर्त में ढकेल देना या फिर अपमानित कर देना बौद्धिक श्रेष्ठता मानी जाती रही है।

सन्दर्भ

1. भारत का संविधान : डॉ. जय जयराम उपाध्याय, सेंट्रल लॉ एजेन्सी, 30 डी./1 मोतीलाल नेहरू रोड, इलाहाबाद, पृ. 6
2. वही, पृ. 186–187
3. भारत का संविधान : डॉ. जय जयराम उपाध्याय, पृ, 06
4 वही, पृ. 186–187